भारतीय संगीत में रस का महत्व : रागों, तालें , लयों , शैलियों, बंदिशों एवं वाद्यों में निहित रस

* डॉ. नित्यप्रिया श्रीवास्तव

* डी. फिल, संगीत प्रवीण, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

भारतीय संगीत हमेशा से ही समृद्ध रहा है ,इसके भीतर अनेकों अनमोल रत्न छुपा हुआ है। यदि रस रूपी विषय पर सूक्ष्मता से विचार करें तो यह पता चलता है कि ''रस'' सम्पूर्ण साहित्य जगत, काव्य जगत को ही नहीं अपितु संगीतजगत के लिए भी अनमोल उपहार है। जिसने संगीत को और अधिक समृद्धशाली बनाने में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

'ऋग्वेद काल से ही, 'रस' का प्रयोग विभिन्न अर्थों में होता रहा है। ऋग्वेद व अथर्ववेद में इसका प्रयोग गौ–दुग्ध, मधु, सोमरस आदि के लिए हुआ है तो उपनिशदों में इसे सारभूत तत्व, ब्रह्मा आदि के लिए भी प्रयुक्त किया गया है।1

'वृहदारण्यक उपनिषद में 'प्राणों वा अंगाना रसः' कहकर रस के सारभूत तत्व के रूप में स्वीकार किया गया तो तैत्तिरीय उपनिषद में ब्रह्म को ही रस–रूप कहा गया है।2 भरतमुनि ने 'रस' को मुख्यतः छठे और सातवें अध्याय में विस्तार से बतलाया है।इस निष्पत्ति का मूल आधार नाट्यशास्त्र के प्रणेता भरतमुनि (ई0पू0 दूसरी शताब्दी) का निम्नलिखित सूत्र है–

''विभावानुभावव्यभिचारि संयोगाद्रस निष्पत्तिः

अर्थात– विभाव अनुभाव तथा व्यभिचारी (भाव) के संयोग से 'रस' की निष्पत्ति होती है।''

''रस का प्रतिपादन करते हुए स्वयं भरत ने सर्वप्रथम प्रश्न किया है– 'रस इति कः पदार्थः ?'' अर्थात रस क्या पदार्थ है? या रस किस पदार्थ का नाम है। इसके उत्तर में उन्होंने लिखा है– ''आस्वाद्यत्वात'' अर्थात आस्वाद्यत्व (त्र आस्वाद प्रदान करने की क्षमता या गुण) के कारण 'रस' को रस कहा जाता है।3

भरत के अनुसार रस के अवयव :

स्थायी भाव–''हृदय में वासना रूप से संस्थित, अन्य भावों द्वारा किसी प्रकार भी न दबने वाले, प्रधान विरोधी–अविरोधी भावों को अन्तर्हित करके आत्म–भाव प्राप्त करा सकने वाले चिरकाल, अथवा आप्रबन्ध स्थायी रहने वाले आस्वाद मनोभावों को स्थायी भाव कहते हैं।[4] भरत ने आठ रस स्थायी भाव को ध्यान में रखते हुए आठ रस की विवेचना की है जो निम्न है–

1.स्थायी भाव: रति
  रस: शृंगार
2.स्थायी भाव: जुगुत्सा
  रस: वीभत्स
3.स्थायी भाव: भय
  रस: भयानक
4. स्थायी भाव: विस्मय
  रस: अद्‌भुत
5. स्थायी भाव: उत्साह
  रस: वीर
6. स्थायी भाव: शोक
  रस: करूण
7. स्थायी भाव: क्रोध
  रस: रौद्र
8. स्थायी भाव: हास
  रस: हास्य

नाट्यशास्त्र' में अन्यत्र नवम् रस–शान्त रस की भी चर्चा मिलती है पर यह अंश प्रक्षिप्त माना जाता है।[5]

रस कभी आप से शून्य नहीं होता और न ही भाव रस से सर्वथा शून्य होता है। अभिनय में एक–दूसरे के आश्रय सवे ही इनकी सिद्धी होती है।[6]

विभाव– ''डा0 आनन्द प्रकाश दीक्षित के शब्दों में– अतएव लोक में प्रचलित हेतु, कारण अथवा निमित्त शब्दों के लिए रस शास्त्र से 'विभाव' शब्द को ग्रहण किया गया है।[7]

foHkko d Hkn

आलम्बन विभावः ''आलम्बन के अन्तर्गत वे सभी पदार्थ, वस्तुएँ, व्यक्ति एवं प्रयोजन जो केन्द्रीय तत्व के आधारभूत हेतु हैं।[8]

उद्दीपन विभावः उद्दीपन विभाव वस्तुतः आलम्बन विभाव का ही एक पूरक तत्व है। आलम्बन विभाव जिस अनुभूति की उत्पत्ति का आधारभूत कारण होता है उसी का विशेषीकरण किया उद्दीपन, उद्दीपन विभाग के द्वारा किया जाता है। उदा0

^^rje gl h vkj xkyk d xï Mky A
cg xb ykfyrk b/kj&m/kj Nkjk ij
T;k QV xb ejh eftY d NkyA

रति के आलम्बन विभाग के रूप में प्रस्तुत नायिका की चेष्टाएं उद्दीपन विभाव बनकर आई है। भाव के आलम्बन को भाव के उद्दीपन के रूप में और भी अधिक आकर्षक बनाने के कारण ये चेष्टाएं अलंकार की कोटि में आयेगी।[9]

संचारी विभाव(व्यभिचारी भाव): ''व्यभिचारी'' भाव को संचारी भाव भी कहते हैं ''व्यभिचारी भाव ऐसे अस्थिर चंचल एवं क्षणिक मनोवेगों के सूचक है जो किसी एक आलम्बन एवं मनोवृत्ति में सम्बन्ध नहीं है।व्यभिचारी भावों की संख्या 33 मानी गयी है। (1) निर्वेद (2) ग्लानि (3) शंका (4) असूया (5) मद (6) श्रम (7) आलस्य (8) दैन्य (9) चिन्ता (10) मोह (11) स्मृति (12) घृति (13) ब्रीड़ा (14) चपलता (15) हर्ष (16) आवेग (17) जड़ता (18) गर्व (19) विषाद (20) औत्सुक्य (21) निद्रा (22) अपस्मार (23) स्वप्न (24) विबोध (25) अमर्ष (26) अवहिल्या (27) उग्रता (28) मति (29) व्याधि (30) उन्माद (31) मृत्यु (32) त्रास (33) वितर्क'' अनुभाव– अनुभाव वे भाव होते हैं जो भावों के पीछे होकर भावों को उद्दीप्त करते हैं–

vuHkko dk vFk g– ''अनुभावयति इति अनुभाव'' या अमरकोश के अनुसार– 'अनुभावों भावबोधकः'' अर्थात रत्यादिक स्थायी भावों का जो अनुभव करायें वही अनुभाव है।[11]

vuHkko d nk Hkn g-

सात्विक अनुभाव– ये मन की सात्विक दशा का भाव कराने की विशेष क्षमता रखते हैं। इनके आठ भेद माने गये हैं–

Lon% LrEHkk·Fk jkekp LojHkxk·Fk oiFk%AA
oo";eJ çy; bR;"Vk lkUr lkfUROdk%
Le'rk%A[12]

अर्थात् –स्तब्ध,स्पेद,रोमांच,स्वरभंग,कंप,वैवर्ण्य,अश्रु,प्रलय

कायिक अनुभाव – ये वे भाव एवं क्रियाकलाप जो व्यक्ति के अधीन होते हैं जिसपर अपना वश चलता जैसे– खेलना, कूदना, पलकों का झपकाना इत्यादि।

रस सम्बन्धित अन्य आचार्यों के मतः रस सिद्धान्त के बारे में भरत के अलावा भिन्न–भिन्न विद्वानों के विभिन्न मत हैं जो निम्नलिखित हैं।

भट्ट लोल्लट का मत–रस निष्पत्ति के सन्दर्भ में भट्ट लोल्लट जो मत हमारे सम्मुख रखें वे इस प्रकार हैं– ''लोल्लट ने रस–निष्पत्ति के व्यापार को तीन व्यापारों में विभाजित किया है पहला व्यापार है 'उत्पत्ति' क्योंकि विभाव भाव को उत्पन्न करते हैं। दूसरा व्यापार है 'प्रतीति' क्योंकि अनुभावों के द्वारा सामाजिक भावों की प्रतीति होती है। तीसरा व्यापार है 'पुष्टि' क्योंकि व्यभिचारी भाव स्थायीभाव के पोषक हैं। इन तीनों व्यापारों के संयुक्त प्रभाव से ही 'रस' की निष्पत्ति संभव होती है। अतः विभावादि से उपचित भाव ही रस है। इस प्रकार 'निष्पत्ति का अर्थ हुआ उपचित।[13]

शंककु का मत–''शंककु का सबसे महत्वूर्ण योगदान यही है कि उन्होंने रसानुभूति में अभिनय–तत्व के महत्व की प्रतिष्ठा की है। दूसरी सिद्धि उनकी यही थी कि उन्होंने अनुकार्य–रूप ऐतिहासिक पात्रों और कवि–निबद्ध पात्रों का अन्तर स्पष्ट किया और लोल्लट द्वारा प्रचारित तत्संबंधी भ्रान्ति का निराकरण किया और इस प्रकार एक और सिद्धि की।[14]

भट्टनायक का मत–''जब रजस और तमस का शमन हो जाता है किन्तु सर्वथा अभाव नहीं होता, विशुद्ध आत्म–विश्रान्ति से हीनतर है ब्रह्मास्वादस विधि है, ब्रह्मा स्वाद नहीं है ब्रह्मानन्द से उसका साम्य वैषम्य स्पष्ट करते हुए या रसास्वाद का स्वरूप निर्णय यह भट्टनायक ने ही सबसे पहले किया। यह मत अन्त तक यथावत मान्य रहा।[15]

अभिनवगुप्त का मत– ये चतुर्थ विद्वान थे जिन्होंने रस सम्बन्धित अपने निम्नांकित मत दिये हैंः–काव्यार्थ को ही रस मानते हुए इन्होंने कहा है कि काव्यार्थ वाक्य से अधिकारी सहृदय को अधिक प्रतीति होती है।[16]

रस की प्रतीति अस्वादन रूप में होती है। वाच्य–वाचक का यह व्यापार वहाँ पर अमिधा से पृथक व्यंजनात्मक ध्वनन व्यापार के रूप में ही होता है।[17]

''परब्रह्मास्वाद सब्रह्मचारित्वं चास्त्वस्य रसास्वादस्य''

अर्थात– यह रसास्वादन परब्रह्मानन्द के सदृश होता है।[18] रस अभिव्यक्त ही होते हैं और प्रतीति के द्वारा ही आस्वादगोचर होते हैं।[19]

jkxk e mifLFkr jl ¼Hkko½:&

रागों का संगीत में अपना एक बिशेष स्थान है प्रत्येक रागों की अपनी अलग प्रकृति होती है और सभी रागों मे अलग अलग रस की अनुभूति होती है । विभिन्न प्रकार के राग और उनमे निहित रस(भाव) के कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं –

1. राग: बहार	रस(भाव): उत्साही युवक
2. राग: वृन्दावनी	रस(भाव): अर्धगंभीर
3. राग: जौनपुरी	रस(भाव): श्रृंगार
4. राग: यमन	रस(भाव): करुण
5. राग: बिहाग	रस(भाव): करुण
6. राग: भैरव	रस(भाव): वीर,शांत
7. राग: रागेश्री	रस(भाव): विप्रलब्धा
8. राग: जोगीया	रस(भाव): विरह वेदना से युक्त नारी
9. राग: सोहिनी	रस(भाव): आवेशयुक्त प्रेम कलह से युक्त
10.राग: ललित	रस(भाव): वियोग
11.राग: गुनकली	रस(भाव): वासक सज्जा
12.राग: तोडी	रस(भाव): विरहदग्धा
13.राग: बागेश्री	रस(भाव): विरहोतकंठिता नारी
14.राग: भीमपलासी	रस(भाव): वीर
15.राग: हमीर	रस(भाव): उत्साह
16.राग: पटदीप	रस(भाव): गंभीर
17.राग: पूर्वी	रस(भाव): भक्ति
18.राग: तिलंग	रस(भाव): चंचल
19.राग: दरबारी कान्हड़ा	रस(भाव): गंभीर
20.राग: देशकार	रस(भाव):श्रृंगार(चंचल)

21.राग: अडाना रस(भाव): श्रृंगार
22.राग: मल्हार रस(भाव): उर्जायुक्त
23.राग: भैरवी रस(भाव): विरह ,वैराग्य ,भक्ति

cfn’kk e fufgr jl ¼Hkko½:

सभी बंदिशों का संगीत में अपना एक अलग ही महत्व है। और सभी बंदिशें अपने भीतर अलग अलग प्रकार के रसों को समाहित किये हुए हैं जो की गायन करते समय जनसाधारण पर तरह तरह के रसों की वर्षा करते हैं जिसकी अनुभूति से श्रोतागण रासासिक्त हो जाते हैं। बंदिशों के द्वारा रस(भाव) सदैव बदलता रहता है जिसका उदाहरण निम्नवत है–

1.राग: मालकौंस
रस: वीर(उत्साह)
बंदिश: भेरी बजी संग्राम की

2.राग: जैजवंती
रस: भक्ति
बंदिश: जय माल रानी तू मान मानी
विद्या सरस्वती बैकुंठ की निशानी ।[20]

3-jkx: n|xk

रस: श्रृंगार(रति)
बंदिश: चतुर सुघरा बालमवां
लैहो कन्हैया बालमवां

4-jkx: c|jkxh Hkjo

रस: शांत (निर्वेद)
बंदिश: सारी दुनियां सपनो की माया
झूठ की छाया ऐसे बनाया

fofHkUu rkyk]y;k ,o 'kfy;k e fufgr jl:&

पं. भगवत शरण शर्मा के अनुसार–प्रत्येक रस में एक ही प्रकार के लय का प्रयोग नहीं किया जा सकता। शोक की अवस्था में मनुष्य के चलने फिरने, कार्य करने तथा बोलने तक की गति मंद हो जाती है। अतः करूण रस के परिपाक के अनुकूल लय विलंबित है। हास्य व श्रृंगार के लिए मध्य लय तथा वीर, अदभूत, रौद्र तथा अद्‌भूत रसों के लिये द्रुत लय को उपयुक्त माना गया है।[21]

गीतमें भिन्न भिन्न शैलियों के लिए अनेको तालो की रचना की गई है। प्रत्येक तालो का अपना एक अलग ही महत्व है क्योकि सभी तालों से अलग अलग रस की उत्पत्ति होती है। ताल के साथ लय का महत्व विशेष मायने रखता है। प्रत्येक ताल अपने छन्द, वादन शैली व गति भेद के कारण पृथक–पृथक रस की सृष्टि करता है–

1.ताल: दादरा(6 मात्रा)
लय: मंद व कोमल
उत्पन्न रस :श्रृंगार

2.ताल: रूपक(7मात्रा)
लय: विलम्बित लय
उत्पन्न रस: करुण रस

3.ताल: कहरवा(8 मात्रा)
लय: मंद व् कोमल
उत्पन्न रस: श्रृंगार

4.ताल: चारताल (12मात्रा)
लय: आवेगयुक्त
उत्पन्न रस: वीर

5.ताल:धमार ताल (14मात्रा)
लय: मध्यलय
उत्पन्न रस: भयानक

6.ताल:चक्रताल
लय: विषम
उत्पन्न रस: हास्य

7.ताल: विषम मात्रा की ताल
लय: जिन तालो में कोई लय न हो
उत्पन्न रस: वीभत्स

8.ताल: तीनताल,गजझम्पा,रूद्र ताल
लय: द्रुतगति
उत्पन्न रस: अद्‌भुत

9.ताल: एकताल (१२ मात्रा)
लय: स्थिर गति
उत्पन्न रस: शांत

fofHkUu 'kfy;k e fufgr jl:&

1.शैली: ठुमरी
रस:श्रृंगार

2.शैली: ध्रुपद–धमार
रस: वीर ,रौद्र,अद्‌भुत , श्रृंगार इत्यादि

3.शैली:खयाल
रस: भक्ति ,श्रृंगार ,शांत ,करुण,वीर, इत्यादि

ok|k e fufgr jl:&

जिस प्रकार रागों ,बंदिशों एवं तालों में विभिन्न प्रकार के रसों को निष्पादित करने की क्षमता निहित है, उसी प्रकार अलग अलग वाद्यों में भी श्रोतागणों के मानस पटल पर भिन्न भिन्न प्रकार के रसों को उत्पन्न करने की क्षमता निहित है–

1.वाद्य: भेरी ,दुन्दुभी ,भू–दुन्दुभी,नगाडा,ढोल,मृदंग ,पखावज
रस: वीर (उत्साह)

2.वाद्य: बांसुरी
रस: भक्ति ,शांत ,

3.वाद्य: सरोद ,सितार
रस: श्रृंगार ,शांत

4.वाद्य: सारंगी ,इसराज ,दिलरुबा , वायलिन
रस: करुण

5.वाद्य: ढोलक ,तबला
रस: श्रृंगार
6.वाद्य: डमरू
रस: रौद्र,भयानक

उपरोक्त विवेचना के अनुसार यह कहा जा सकता है, कि संगीत के कण–कण में रस पूर्णतया व्याप्त है । चाहे राग हो, ताल हो ,वाद्य हो ,लय हो या बंदिशें हो, सभी में रस की अनुभूति होती क्यूंकि रसहीन गायन वादन जनसाधारण के साथ तादातम्य जोड़ने में सदा ही असफल होते हैं। संगीत का मुख्य उद्देश्य जनरंजन,रसानुभूति एवं आत्मसुख है जोकि संगीत को आनंद की चर्मोवस्था तक ले जाता है जिसमे रस का बहुत महत्वपूर्ण योगदान होता है ।

संदर्भ ग्रंथ

1.रस सिद्धान्तःस्वरूप विश्लेषण, डा0 आनन्द प्रकाश दीक्षित पृ0 3–4
2. रसौ वै सः। तैत्तिरीयोपनिषद, 2ध्7
3. भरत कृत नाट्य शास्त्र, छठा अध्याय
4. रस सिद्धान्तरू स्वरूप विश्लेषण – डा0 आनन्द प्रकाश दीक्षित, पृ0 95
5. रस सिद्धान्त का पुर्नविवेचन डा0 गणपतिचन्द्र गुप्त, पृ0–20
6. हिन्दी अभिनव भारती, पृ0 511 (नाट्य शास्त्र, 6ध्33–36)
7. रस सिद्धान्तरू स्वरूप विश्लेषण, पृ0 ंसं0 17–18
8. रस सिद्धान्त का पुनविवेचन – डा0 गणपति चन्द्र गुप्त पृ0 374
9. रस–प्रक्रिया – डा0 शंकर देव अवतरे– पृ0 55
10.रस सिद्धान्त का पुनर्विवेचन डा0 गणपति चन्द्र गुप्त, पृ0 18
11. सौन्दर्य, रस एवं संगीत– प्रो0 स्वतंत्र शर्मा– पृ0 108
12. साहित्य दर्पण– 3, 153–136
13. रस सिद्धान्त (इतिहास और मूल्यांकन)–डा0 रामगोपाल शर्मा पृ.70
14. रस–सिद्धान्त और सौन्दर्य शास्त्र–निर्मला जैन– पृ0 26
15. रस सिद्धान्त डा0 नगेन्द्र– पृ0 169
16. अभिनव भारती– अभिनव गुप्त भाग–1, पृ0 278
17. ध्वन्यालोक – पृ0 198–99
18. ध्वन्यालोक– पृ0 200
19. ध्वन्यालोक– पृ0 200
20. सौंदर्य रस एवं संगीत दृ डॉ स्वतंत्र शर्मा – पृ0 126–127
21. निबन्ध संगीत – श्री लक्ष्मी नारायण गर्ग, लेख भगवत शरण शर्मा संगीत कला और सौन्दर्य पृष्ठ सं. 303